International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(5): 133-137

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(5): 133-137
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 12-07-2021
Accepted: 19-08-2021

कुमुद कुमार पाण्डेय
शोधार्थी–संस्कृत, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
कुमुद कुमार पाण्डेय
शोधार्थी–संस्कृत, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत

वेद में सृष्टि विषयक की अवधारणा

कुमुद कुमार पाण्डेय

सारांश
भारतीय मनीषा आत्मबल पर न जाने कितने असम्भव कार्यों को उसी समय कर चुकी है जब सारा विश्व प्रगाढ़ निद्रा में सोया हुआ था भारत ने ही सारे संसार को विचारने की शक्ति दी। उस असीम सत्ता के अभास के लिए मार्ग–निर्देशन दिया सृष्टि की उत्पत्ति विषयक अवधारणा का प्रथम सूत्रपात्र तो नासदीय सूक्त में प्राप्त होता है। इसमें ऋषि की जिज्ञासा के दर्शन होते हैं वेदों में सृष्टि विषयक अवधारणा पर बहुविध कल्पनाओं की गयी है सामान्यतः प्रजापति को स्रष्टा कहा गया है ऋग्वेद की एक ऋचा में सृष्टिकर्ता को तथा अर्थात् बढ़ई रूप में स्मरण किया गया है कोई बढ़ई जैसे काठ के उपकरणों को सजाकर भवन का निर्माण करता है उसी तरह प्रजापति ने विश्वकर्मा के रूप में इस सृष्टि का निर्माण किया गया है। ऋग्वेद के दशम मण्डल सूक्त संख्या 81,82 तथा 91 एवं ऋचाएं 2,4,5 और 7 में सृष्टि निर्माण के संदर्भ में बहुत सारी महत्वपूर्ण बातों का निष्पादन किया गया है।

प्रस्तावना
वेद भारतीय संस्कृति के आधार स्तम्भ है इस देश की सभ्यता के मूलस्रोत है आर्यों के ज्ञान की धरोहर है मानव मनीषा का विश्वकोष है भारतीय धर्म की आधारशिला है वेद के माध्यम से अलौकिक ज्ञान की प्राप्ति। जिसके माध्यम से इष्ट की प्राप्ति, यथा–यज्ञादि शुभ कर्म से अभिलषित वस्तु की उपलब्धि होती है। अतः इष्ट–अनिष्ट, ग्राह्य–त्याज्य, उपादेय–अनुपादेय का ज्ञान वेद से ही हमें मिलता है।

प्रत्यक्षेणानुमित्या वा यस्तूपायो न बुध्यते।
एवं विदन्ति वेदेन तस्माद्वेदस्य वेदिता।।[1]

वेदों में सृष्टि निर्माण के सन्दर्भ में बहुविध कल्पनायें की गयी है सामान्यतः प्रजापति को जगत का स्रष्टा कहा गया है यह प्रजापति ही इन्द्र, वायु और सूर्य के रूप में जहाँ कही स्तुत या सम्पूज्य माना गया है। ऋग्वेद के एक सूक्त के अनुसार सूर्य को जगत की आत्मा के रूप में स्वीकार किया गया है–

आप्राद्यावापृथ्वी आन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्तुषश्च।[2]

सृष्टि प्रक्रिया की पूर्व स्थिति
सृष्टि की उत्पत्ति विषयक धारण का प्रथम सूत्रपात नासदीय सूक्त मे प्राप्त होता है नासदीय सूक्त प्रथम मन्त्र में सृष्टि प्रक्रिया की पूर्व स्थिति का वर्णन करते हुए कहा गया है–

नासदासीन्नो सदासीत्तदानी नासीद्रजों नो व्योमपरोयत्।
किमावरीव कुह कस्य शर्मन्नम्भः किमासीद्गहनं गंभीरम्।।[3]

अर्थात् सृष्टि से पूर्व पहले प्रलय दशा में असत् अर्थात् अभावात्मक तत्व नही था और सत्तात्मक तत्व भी नही था, रजः अर्थात् पृथ्वी से लेकर पताल पर्यनत चौदह लोकों में से न कोई लोक था न

अन्तरिक्ष था और अन्तरिक्ष से परे भी जो कुछ है वह भी नही था। यही रामानुज ने स्पष्ट किया कि 'प्रलयदशा में असत् अर्थात् अचिर्द व्यष्टि और सत् अर्थात् चिद्व्यष्टि ये दोनों ही तमः पदवाच्य अचित्सष्टि में प्रलीन हो जाती है।[4]

सृष्टि प्रक्रिया

प्रकृति (जड़) एवं पुरुष के संयोग से ही सृष्टि का प्रारम्भ होता है सृष्टि का प्रयोजन पुरुष को मोक्ष दिखाना है प्रकृति भोग्या है तथा पुरुष भोक्ता है भोग्य प्रकृति भोक्ता पुरुष के साथ मिलकर ही कैवल्य के लिए प्रयत्न करती है। दोनों का संयोग अंधे–लगड़े के समान है। जिस प्रकार अन्धे और लंगड़े मिलकर स्वकार्य को प्रारम्भ करते है अतः पुरुष को प्रधान की आवश्यकता रहती है परन्तु जिज्ञासा होती है इन दोनों के संयोग होने पर भी महद् आदि की सृष्टि किस कारण से हुई? इसका उत्तर यह
है कि यह सृष्टि प्रकृति के साथ पुरुष के संयोग के कारण होती है महद् आदि की सृष्टि से बिना भोग या कैवल्य की उत्पत्ति नही हो सकती है अतः उक्त संयोग ही महद् आदि सृष्टि का कारण है –

पुरुषस्य दशनार्थ कैवल्यार्थ तथा प्रधानस्य।
षङ्ग्वन्धवदुभयोरपि संयोगस्तत् कृतः सर्गः।।[5]

प्रकृति को किसी ने जन्म नही दिया है वह अजन्मा होकर भी सारी सृष्टि की जन्मदात्री है यह अनवस्था दोषशून्य सृष्टि का आदि कारण होने के कारण फलस्वरूप प्रकृति कहलाती है विलक्षण विभूति, ऐहिक ऐवर्श्य, समस्त सृष्टि संचालन की क्षमता तथा अपने जडत्व के कारण अज्ञान या अविद्यारूधारिणी प्रकृति ''माया'' कहलाती है –

प्रकृतिरिति उच्यते विचारोत्पादकत्वात्।
अविद्याज्ञानविरोधत्वात् ''माया'' सृष्टिकरणत्वात्।[6]

सृष्टि की प्रथमोत्पत्ति :

सृष्टि के उत्पन्न होने से पहले अर्थात् प्रलयावस्था में यह संसार अन्धकार से ढका हुआ था और यह विश्व अपने तमस् रूप मूल कारण में विद्यमान था।
यह सम्पूर्ण जगत उस समय सलिल रूप में था अर्थात् उस समय कार्य और कारण दोनों मिले हुये थे यह जो विश्व विस्तृत एवं संकुचित अभाव रूप अज्ञान से ढका हुआ था तो वह कारण के साथ एक ही भूत हुआ। संसार ईश्वर के संकल्प रूप तप की महिमा से उत्पन्न हुआ।[7]

कामस्तग्रे समवर्ततााधि मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्।
सतो वन्धुमसति निरविन्दन् हृदि प्रतीष्यां कवयोमनीष।[8]

सृष्टि सृजना करने से प्रथम संसार को बनाने की इच्छा ही उत्पन्न हुई जो परमेश्वर के मन में सबसे पहला सृष्टि का बीज रूप कारण हुआ अस्तित्व रूप से विद्यमान जगत के बन्धन के कारण को कान्तदर्शी ऋषियों ने अपनी बुद्धि से हृदय में विचार कर भाव से विलक्षण अभाव में अन्वेषण करने पर पाया।

सृष्टि के कारणों पर विचार

न असत् था और न सत् मात्र अज्ञान ही था परम् पुरुष का संकल्प तथा मनसाः रेतः से सृष्टि का बीज रूप धारण का सूर्य की किरणों के समान अत्यधिक व्यापकता का भाव विस्तृत था यह सब पहले क्या तिरछा था या मध्य भाग में विद्यमान था क्या वह नीचे विद्यमान था? अथवा ऊपर विद्यमान था? अर्थात् वह स्थानों पर भाव से उत्पन्न हुआ था इस प्रकार उत्पन्न हुए जगत में कुछ पदार्थ बीज रूप कर्म कारण करने वाले जीव रूप थे और कुछ पदार्थ आकाश आदि महान रूप कर्म को धारण करने वाले जीव रूप में थे और कुछ पदार्थ आकाश आदि महान रूप में प्रकृति रूप में थे इस श्रोक्ता तथा भोग्य सृष्टि में भोग्य पदार्थ समझे जाते थे और नियमित करने वाला भोक्ता उत्कृष्ट माना जाता है।

तिरश्चीनों विततों रशिरेषामधः स्विदासीऽदुपरि स्विदासीऽत्।
रेतोधा आसन्महिमानं आसन्स्वधा अवस्तात्प्रयति परस्तात्।[8]

कारणों पर विचार करते हुए कहा गया है कि कौन इस बात को वास्तविक रूप में जानता है और कौन इस लोक मे सृष्टि के उत्पन्न होने की क्रिया समझा सकता है कि यह विविध प्रकार की सृष्टि कि उपादान कारण से और किस निमित्ति कारण से हुई है। देवता भी इस विविध प्रकार की सृष्टि के उत्पन्न होने के बाद के है अतः वे भी अपने से पहले की बात नहीं बता सकते। अतएव कौन मनुष्य जानता है? जिस कारण से यह सारा संसार उत्पन्न हुआ है।

को अद्धा वेदु क इह प्र वोचत् कुत् आजात् कुत इयंविसृष्टिः।
अर्वाग देवा अस्य विसर्जनेनाथ को वेंद यतं आ बभूवं।।[9]

यह विविध सृष्टि जहाँ से उत्पन्न हुई अथवा यह किसी के द्वारा धारण की जाती है अथवा नहीं इस बात को, जो इस जगत का अध्यक्ष सर्वोच्च आकाश या द्युलोक में है वह भले ही जानता है अथवा वह भी नहीं जानता है।

इयं विसृष्टिर्यतं आवभूव यदि वा दधे वा न
यो अस्याध्यक्षः परमे व्योमन सो अ॰ वेदं यदिं वा न वेदं।[10]

नूतन सृष्टि सम्पादन

कल्पान्तर में सुविस्तृत जलराशि सम्पूर्ण सृष्टि को समावृत कर लेता है तब उसी में बीजरूपेण स्थित तथा देवताओं के प्राण स्वरूप ''प्रजापति'' का नूतन–सृष्टि–सम्पादनार्थ अविर्भाव होता है –

आपों ह यद् बृहतीर्विश्मायन्गर्भ दधाना जनयंन्तीरग्निम्।
ततों देवानां समवर्ततासुरेकः कस्मै देवायं हविषविधेम्।।[11]

जिस हिरण्यगर्भ रूप प्रजापति को गर्भ के रूप में धारण करते हुये, अग्नि को उत्पन्न करते हुये महान् जलों ने निश्चय ही सृष्टि के प्रारम्भ में सम्पूर्ण विश्व को व्याप्त किया था, उसी से देवताओं का एक मात्र प्राणभूत वायु उत्पन्न हुआ। उसको छोड़कर किस देवता को हम लोग हवि से पूजन करे?
प्रलय अवस्था में सभी ओर जल ही जल की विद्यमानता पुराण प्रसिद्ध है ऋग्वेद में भी यही बात कही गयी है –

''तम् आसीत् मूल्लहमग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम्।।'[12]

ऋग्वेदयें हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे। इसमें प्रयुक्त ''अग्रें'' की ही भाँति यहां भी ''यद्'' सृष्टि की प्रारम्भिक अवस्था का द्योतक है।

उत्पादकत्व

प्रजायति सम्पूर्ण सृष्टि को उत्पन्न करने वाला है उसने आनन्ददायक विशाल जलराशि को उत्पन्न किया है–''यश्चापचन्द्र वहुतीर्जजान्''[13] अपनी महिमा से उस जलराशि को चारों ओर इस प्रकार देखा कि वह सृष्टि रुपेण विष्णु दक्षप्रजापति को गर्भवत् धारण करे और सृष्टि समुत्पादिका ऊष्मारूपी अग्नि को उत्पन्न करे प्रजापति के कामना रूपी रेतस के बिना अप्रकेत सलिलरूपी क्षेत्र से सृष्टि की उत्पत्ति संभव नहीं है।
प्रजापति जड और चेतन उभयविध, जगत का निर्माता है पर्वत समुद्र और नदियां उसकी महिमा है और इनकों उसकी महिमा बतलाने का प्रयोजन उन पर उसके कर्तव्य को उद्भासित करना है

वह प्राण दाता और बदलाता है उसी ने पृथ्वी और द्युलोक को उत्पन्न किया–यः पृथित्यां यो वा दिवं सत्यधर्मा जजानं।''[14]

स्वामित्व

''हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्''[15] प्रजापति सभी प्राणियों का स्वामी है वह मनुष्यादि द्विपद और अश्वादि चतुष्पद जीवों का स्वामी है प्राणियों के जन्म और मृत्यु दोनों ही उसके अधिकार में है मनुष्य तो क्या उसके शासक को देवता भी मानते है –

य आत्मा बलदा यस्य विश्वं उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्यच्छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवायं हविषा विधेम।।[16]

जीवधारियों, देवताओं और विविध लोकों पर ही उसका अधिपत्य नही है वह दिशाओं और विदिशाओं का भी स्वामी है द्युलोक और पृथ्वीलोक भी मन से कांपते हुए उसकी ओर देखते है– ''यं क्रनदसी अवसा तस्तभाने अभ्यैक्षेतां मनसा रेजमाने''[17] इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रजापति सम्पूर्ण सृष्टि का एक मात्र अधिपति है।

पुरुष से अनेक विध सृष्टि की उत्पत्ति

आदि पुरुष से विराट् और विराट् से आधिष्ठाता के रूप में जीवात्मा पुरुष उत्पन्न हुआ। यह उत्पन्न होते ही पृथ्वी में चारों ओर देव–तिर्यक्–मनुष्यादि के रूप में व्याप्त हो गया पशु–पक्षियों में वायु–विहारी, अरण्यचारी और ग्राभ्य प्रशु उत्पन्न हुए। ''पुरुष'' के मुख, भुजा, उरूदेश और चरणों से क्रमशः ब्रह्मण, क्षेत्रीय और शूद्र रूप मनुष्य वर्ण उत्पन्न हुए जिससे समाज में चतुर्विध वर्ण की कल्पना अवान्तर युग में उत्पन्न हुई –

ब्रह्मर्णोऽस्य मुखमासीदबाहु राजन्यः कृतः।
उरू तदस्य यद्वैश्यः पदभ्याशूद्रों अजायत।।[18]

देवताओं में से सूर्य, चन्द्र, इन्द्राग्नि और वायु आदि का सम्बन्ध ''पुरुष'' के क्रमशः नेत्र, मन, मुख और प्राण आदि से है–

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूयो अजायत।
मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणद्वायुरजायत।।[19]

सृष्टि की सिद्धि के लिए ''पुरुष'' को हवि के रूप में कल्पित कर किये गये यज्ञ का वर्णन किया गया है उस सबसे पहले उत्पन्न यज्ञ के साधन भूत पुरुष पशु को देवताओं ने पवित्र दूर्वा पर रखकर जल से अभिषक्त किया, उस पर जल छिडका पुरुष पशु से देवताओं ने प्रजापति आदि सृष्टिकत्ताओं ने, तथा जो ऋषि थे उन्होंने यज्ञ सम्पादित किया।

तं यज्ञं वर्हिषि प्रौक्षन पुरुषं जातमंग्रतः।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषंयश्च ये।।[20]

लोकोपकरिका

सृष्टि सतत् लोकोपकारिका है लोग उसके सौजन्य के कारण ही उससे गाय, अश्व, पक्षी, प्रतिष्ठा, ऐश्वर्य और वर्चस्विकता की याचना करते है तो कभी गाय आदि पशुओं और अन्नादि धान्य–सम्पत्ति की याचाना करते है जो मनुष्यों के मध्य वाधारहित है जिसके ऊँचे–नीचें तथा समतल अनेक प्रदेश है, जो नाना पराक्रम वाली औषधियों को धारण करती है –

असंवाध मध्यतो मानवनां यस्या उद्वतः प्रवतः समं बहु।[21]

उपनिषदों में सृष्टि

उपनिषदों में भी सृष्टि के विषय में पर्याप्त विचार किया गया है सृष्टि असत् से होती है या सत् से इस में दोनों पक्षों के सिद्धांत उपलब्ध है अतः जो पक्ष जहाँ युक्ति संगत प्रतीत होता हो, वही उपनिषद् का सृष्टिविषय समझना चाहिए –

भूततो अभूततों वाऽपि सृज्यमाने समाश्रुतिः।
निश्चितं युक्तियुक्तञ्च यत्तद् भवति नेतरम्।।[22]

सृष्टि विषयक का वशिष्ट चिन्तन श्रुतियों में उपलब्ध है गौड़पाद के अनुसार श्रुतियों में प्रकारान्त से ब्रह्मतत्व की विशद् व्याख्या की गयी है।[23]

सृष्टि का मूल तत्त्व जल को बतलाया गया है जल से सत्य, सत्य से ब्रह्म और ब्रह्म से प्रजापति से देवता उत्पन्न हुए तत्पश्चात् शेष समस्त सृष्टि उत्पन्न हुई।[24]

कठोपनिषद के अनुसार – ''अग्नि'' सृष्टि–संविज्ञान का एक महत्वपूर्ण तत्त्व है क्योंकि इस सृष्टि के सम्पूर्ण कणों में किसी न किसी रूप में अग्नि प्रविष्ट है।[25]

छान्दोंग्योपनिषद के अनुसार – ''सभी वस्तुओं का मूल स्रोत आकाश ही हैं भौतिक इन्द्रियों का ग्राह्य सभी भौतिक तत्त्वा की उत्पत्ति का स्थान आकाश है।''[26]

छान्दोग्य, तैत्तिरीय और वृहदारण्यक उपनिषदों की एक ही मान्यता है कि इस सृष्टि का मूल ''असत्'' है। असत् से ही सत् की उत्पत्ति हुई। आगे चलकर यही सत् एक ब्रह्माण्ड बन गया। यह ब्रह्माण्ड पृथ्वी और द्यौ के नाम से दो खण्डों में विभक्त हो गया फिर इसी के अशों से पहाड, मेध, नदियाँ और सागर उत्पन्न हुए ब्रह्माण्ड से आदित्य उत्पन्न हुआ इसी आदित्य से समस्त सृष्टि उत्पन्न हुई।।[27]

''छान्दोग्योपनिषद्'' में सारी सृष्टि की उत्पत्ति का मूल स्रोत ''सत्'' कहा गया है सत् से तेज, तेज से जल, जल से अन्न, अन्न से आण्डज, जीवज और उद्भिज उत्पन्न हुए।[28]

माण्डूक्योपनिषद्

मनुष्य की एक स्थिति को तुरीय स्थिति कहा गया है यह स्थिति मनुष्य की प्राणशक्ति से सीधे सम्बद्ध है प्राण शक्ति में प्रज्ञा का प्रकाश भरा है। प्राण को परम तत्व माना गया है। प्राण का यह सम्प्रत्यय ही तुरीयावस्था है यही प्राणतत्त्व सृष्टि के सारे वस्तुओं को उत्पन्न करता है।''[29]

श्वेतश्वरउपनिषद

''इस जगत का सर्जक परमदेव परमात्मा को माना गया है।[30] नारायण उपनिषद में भी कहा गया है कि श्री नरायण ने अपनी संकल्पना शक्ति से इस सृष्टि का उत्पादन किया है। प्रश्नोपनिषद् में समस्त सृष्टि का समुत्पादनकर्ता प्रजापति को माना गया है श्वेताश्वर उपनिषद् में सृष्टि के छः मत माने गये है –

काल, स्वभाव, नियति, यदृच्छा पंचमहाभूत या पुरुष को लोग समस्त भूतों की योनि मानते है।[31]

प्रत्येक मनुष्य को इस सृष्टि–संरचना के क्रम में स्वंय विचार करना चाहिए और स्वयं ही अनुभव भी करना चाहिए ईश्वर सत्य है वह सत्य स्वरूप है वही इस सम्पूर्ण सृष्टि का सर्जक है यह चिन्तन तपोब्रह्म के उपनिषद पाठ पर ही आधारित है वस्तुतः सृष्टिविषयक का सर्जक परमपिता परमात्मा तो है इसे ही अग्नि, वरूण, इन्द्र, सूर्य, हिरण्यगर्भ या प्रजापति के रूप में लोग जानते है। ईश्वर सम्पूर्ण सृष्टि का सूत्रधार है, वृहदारण्यकोप निषद् में कहा गया है कि ठीक उसी प्रकार जैसे चक्र की आरायें उसके केन्द्र या नाभि में सगृहीत रहती है।[32] एक मात्र परमात्मा ही सम्पूर्ण सृष्टि का सर्वस्व है ईश्वर सत्य का भी सत्य है। आत्मा का भी परम आत्मा है जीव और जगत का मूलाधार है यदि जीव और जगत् सत्य है तो परमात्मा परम सत्य है। वृहदारण्यक उपनिषद में कहा गया है कि मूर्त्त–अमूर्त्त, चर–अचर–यह भी सत्य है और परमात्मा सम्पूर्ण सृष्टि का परम सत्य है सर्वस्व है और उसका सारतत्व है।''[33]

पौराणिक सृष्टि

पुराणों के अनुसार ब्रह्मा विष्ण महेश का सृष्टि निर्माण में पूर्ण सहयोग है। प्राधानतः सृष्टि का निर्माण ब्रह्मा के द्वारा होता है किन्तु सुष्ट्यर्थ प्रेरणा उनको विष्णु से ही प्राप्त होती है। विष्णु के नाभिकमल के ऊपर ब्रह्मा का निवास होता है वे आकाशवाणी के द्वारा तप के लिए प्रेरित किये जाते है फलस्वरूप सौ दिव्य वर्षों तक तपोपरान्त उनको सृष्टि निर्माण की योग्यता प्राप्त होती है और भगवान विष्णु से सामार्थ्य प्राप्त करके वे इस विशाल विश्व की रचना में प्रवृत्त होते है इसीलिए विष्णु–पुराण ब्रह्मा को हरि का ही रूपान्तर कहता है।[34]

शैवपुराणों में सृष्टि के सभी कार्य शिव की ही प्रेरणा से होता है सृष्टि कार्य में रूद्र का सहयोग भी विशेष रूप से है भागवत तथा मार्कण्डेय ने रूद्र सर्ग की चर्चा विस्तार के साथ की है जो अर्धनारीश्वर स्वरूप में होने से स्वदेह को द्विविध–नर एवं नारी के रूप से सृष्टि का निर्माण करते है। वे आदि दम्पत्ति है पुराणों में समन्वय–दृष्टि नितान्त आवर्जनीय है। भावतसम्प्रदाय का यही वैशिष्ट्य रहा है।[35]

उपनिषदों में कपिल को श्रेष्ठतम् विद्वान के रूप में प्रदर्शित किया गया है तत्त्वों की मीमांसा उनका महान वैशिष्ट्य है उनकी अपनी सृष्टि प्रक्रिया है जिसका पूरा प्रभाव पौराणिक सृष्टिवाद पर देखा जा सकता है। किन्तु किचित वैषम्य भी है। क्योंकि सांख्य प्रकृति एवं पुरुष को मूल तत्त्व मानता है जबकि पुराणों में ये दोनों परमात्मा के अंश है और प्रलय अवस्था में पुनः अपने करण विलीन हो जाते है–जैसा कि विष्णुपुराण में कहा गया हैं –[37]

प्रकृतिर्यां ममाख्या व्यक्ता व्यक्तस्वरूपिणी।
पुरुषश्चाप्युभावेतौ लीयते परमात्मनि।।
परमात्मा च सर्वेषामाधारः परमेश्वरः।
विष्णुनामा स वेदेषु वेदान्तेषु च गीयते।।

वायुपुराण में भी सृष्टि आदि में उत्पन्न होने के कारण इनको कुमार शब्द से इंगित किया गया है।[37]

यथोत्पन्नास्तथैव कुमार इति चोच्यते।
तस्मात्सनत्कुमारोऽयमिति नामास्य कीर्तितम्।।

विश्वनाथ चक्रवर्ती के अनुसार–ब्रह्मा के ध्यानपूत अवस्था में स्थित मन के द्वारा मानुष सृष्टि हुयी है। किन्तु सनत्कुमारादि कुमारों की सृष्टि भगवद्ध्यान्–जन्म एवं भगवद्जन्म होने से उभयात्मक है। सुवोधिनी कार बल्लभाचार्य कुमारों के देव एव मनुष्य दोनों मानकर उभयात्मक सृष्टि प्रतिपादित करते है। निम्बाकाचार्य, शुकदेवचार्य बल्लभ–मत करते हुए कुमारों के मनुष्य कोटि का विरोध करते हुए उनको ज्ञानभक्ति–सम्प्रदाय का प्रवर्तक मानते है पुराणों में ये ब्रह्मा के मानस पुत्र रूप में वर्णित है अतएव इनका जन्म ब्रह्मा के यहाँ तथा नित्य प्रकट होने से चिरस्थायित्व के कारण अन्यतम जाने जाते है।[38]

प्राणि–सृष्टि में अनेकों प्राणियों का जन्म किस प्रकार हुआ इसका विशद वर्णन पुराणों में प्राप्त होता है। प्राणियों में असुर, सुर, पितर, तथा मनुष्य प्रधान है सर्वप्रथम सृष्टि की कामना करने पर ब्रह्मा ने ध्यानावस्थित होकर तमोगुण के अधिक्य से जंघा से असुरों को प्रकट किया। असुरों को उत्पन्न करने के बाद ब्रह्मा ने तामसिक देह का परित्याग कर दिया जो रात्रि के रूप में परिणित हो गयी। अनन्तर सात्त्विक शरीर को धारण करके उनके मुख से सत्वप्रधान सुरों का प्रकाट्य हुआ। इसके बाद आंशिक सत्त्वमय देह को धारण किया और अपने पार्श्व भाग से पितरों को उत्पन्न किया वह छोड़ा गया शरीर दिन एवं रात्रि का मध्यकालीन समय सन्ध्या बना। इसके बाद पुनः ब्रह्मा ने रजोमय देह का आश्रय लेकर रजः प्रधान मनुष्यों का निर्माण किया और वह त्यागा गया शरीर ज्योत्सना अर्थात् प्रभात काल बन गया।[39]

विराटपुरुष

विराट पुरुष की ऋग्वेद में कल्पना भारतीय दर्शन की पट्टशिला है सृष्टि की प्रक्रिया का उद्घोषक है समस्त सृष्टि में सर्व व्यापक है। संसार–संचालन के कारण भूत है समस्त सृष्टि का उत्पादक एवं संचालक हैं इसके अनेक नाम है सभी मानव का हृदय समान है और उनकी आत्यन्तिक चाह भी समान ही है। अतः मानवात्मा चाहती है, पूर्ण आनन्द। जहाँ चाह है वही दुःख है। क्योंकि वहाँ अभाव है अभाव का पूर्ण अभाव ही आनन्द है। यही प्राणियों की स्वतन्त्रता भी है और मुक्ति भी।[40] ब्राह्मण ग्रन्थों में प्रजापति को सर्वश्रेष्ठ देवता घोषित किया गया है।[41]

कठोपनिषद् के अनुसार विराटपुरुष सर्वव्यापक, नियन्ता, जगदधार, सर्वज्ञ एवं सर्वशक्ति मान है – पुरुषान्नापरं किचिंत[42]। असंख्यशिर, अनगिनत आँखे, अगणित पैर वाला विराट् पुरुष इस धरती को समाच्छदित कर इस धरा से दश अगुल बाहर तक फेला है। इसी विराट पुरुष से कालसम्बद्ध सारी सृष्टि अतीत, अनागत और वर्तमान रूप में अवस्थित है यह देखताओं का अधिपति है सम्पूर्ण लोक इसके एक चतुर्थांस में जीवित या मृत स्थिति में अवस्थित है काल विभाजनकर्ता यही विराट पुरुष है। वसन्त, ग्रीष्म और शरद् ऋतुए इसी के परिणाम् है। सृष्टि रूपी यज्ञ में वसन्त घृत, ग्रीष्म इन्धन एवं शरद हविष है। इसी विराट पुरुष ने उस यज्ञ से वायव्य, आरण्य एव ग्राम्य पशुओं को उत्पन्न किया है। सभी वेद इसी से उत्पन्न हुए है। इसी ने वर्णामय व्यवस्था को गुण–कर्म के आधार पर व्यवस्थित किया है इसी विराट पुरुष को उत्पन्न किया है। वायु एवं इन्द्रभी इसी से उत्पन्न हुए है। इसी के अ॰ से आकाश, अन्तरिक्ष, धरती, दिशा, विदिश में उत्पन्न हुई है। वारह महीने, छः ऋतुयें, तीनो लोक और आदित्य सब इसी विराट पुरुष द्वारा सम्पादित यज्ञ की परिधियाँ है।[43] गौतम का कथन है कि अदिति ही माता है अदिति ही पिता है, वही पुत्र है, वही समस्त देवता है अदिति ही पंचन है अर्थात् निषाद सहित पंचवर्ण है। संसार में जो कुछ उत्पन्न है तथा जिनके उत्पन्न होने की सम्भावनायें है वह सब अदिति ही है।

अदितिर्द्यौरदितिरत्नरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः।
विश्वदेवा अदितिः पंचजना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्।

निष्कर्ष

इस जगत के स्रष्टा ईश्वर ने अपने नाभिमण्डल में की अण्ड की स्थापना की और उसी अण्ड में यह ब्रह्माण्ड अवस्थित है उस परमेश्वर को जनसामान्य पहचानते नहीं है वही परमात्मा जीवात्मा के रूप में हमारे पास है किन्तु वह परमात्मा इससे परे है इस समस्त सृष्टि के निर्माता परमपिता परमेश्वर है।

सारांश

भारतीय मनीषा आत्मबल पर न जाने कितने असम्भव कार्यों को उसी समय कर चुकी है जब सारा विश्व प्रगाढ़ निद्रा में सोया हुआ था भारत ने ही सारे संसार को विचारने की शक्ति दी। उस असीम सत्ता के अभास के लिए मार्ग–निर्देशन दिया सृष्टि की उत्पत्ति विषयक अवधारणा का प्रथम सूत्रपात्र तो नासदीय सूक्त में प्राप्त होता है। इसमें ऋषि की जिज्ञासा के दर्शन होते हैं वेदों में सृष्टि विषयक अवधारणा पर बहुविध कल्पनाओं की गयी है सामान्यतः प्रजापति को स्रष्टा कहा गया है ऋग्वेद की एक ऋचा में सृष्टिकर्ता को तथा अर्थात् बढ़ई रूप में स्मरण किया गया है कोई बढ़ई जैसे काठ के उपकरणों को सजाकर भवन का निर्माण करता है उसी तरह प्रजापति ने विश्वकर्मा के रूप में इस सृष्टि का निर्माण किया गया है। ऋग्वेद के दशम मण्डल सूक्त संख्या 81,82 तथा 91 एवं ऋचाएं 2,4,5 और 7 में सृष्टि निर्माण के संदर्भ में बहुत सारी महत्वपूर्ण बातों का निष्पादन किया गया है।

सन्दर्भ

1. तैत्तिरीय भाष्यभूमिका, सायण।
2. ऋग्वेद 1.115.1
3. ऋग्वेदसंहिता 10/129–1
4. ब्रह्मसूत्र रामानुजभाष्य– 1/1/1
5. ईश्वरकृष्ण की सांख्यकारिका– 21 श्लोक
6. सांख्य प्रवचनभाष्य
7. संस्कृत दिग्दर्शन– पृ0 36
8. ऋग्वेदसंहिता–10/129–4
9. ऋग्वेद संहिता–10/129–5
10. ऋग्वेद संहिता–10/129–6
11. वहीं 10/129–7
12. ऋग्वेद–10/12/17
13. वही, 10/129/13
14. वही, 10/129/9
15. वही,
16. वही, 10/129/2
17. वही, 10/129/6
18. ऋग्वेद पुरूषसूक्त– 10/90/12
19. वही, 10/90/13
20. वही, 10/90/17
21. अथर्ववेद 12.1.2
22. माण्डूक्यकारिका– 2.23
23. वही–2.15
24. कठोपनिषद् 2.5
25. छान्दोग्योयनिषद् 1.9.1
26. वही, 19.1.3
27. वही 6.6.3
28. कौषतिक उपनिषद–3.9
29. श्वेताश्वतर उपनिषद्–1.2
30. वही
31. वृहदारण्यकोपनिषद–11.5.15
32. वही 11.1.6
33. चौखम्भा प्रतियोगिता–प्रकाश संस्कृत पृ0 6.42
34. वही,
35. वही, पृ0 6.43
36. वायुपुराण
37. चौखम्भा प्रतियोगिता प्रकाश संस्कृत– पृ0 4.42
38. वही,
39. भारतीय दर्शन (जगदीश चन्द्रमिश्र), पृ0 51
40. शतपथ–ब्राह्मण– 51.2.10
41. कठोपनिषद् 3.11
42. भरतीय दर्शन (जगदीश चन्द्र मिश्र) पृ0 51
43. ऋग्वेद 1.89.10